REVIEW OF RESEARCH
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF) UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514 ISSN: 2249-894X
VOLUME - 8 | ISSUE - 5 | FEBRUARY - 2019

निर्मलवर्मा का परिचय एवं साहित्य दृष्टि

डॉ.ए.सी.वी.रामकुमार
सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग, तमिलनाडु केंद्रीय विश्वविद्यालय, तमिलनाडु, भारत।

जीवन परिचय :

किसी भी रचनाकार की रचनाओं का मूल्यांकन करने से पूर्व उसके व्यक्तिगत जीवन का परिचय प्राप्त करके व्यक्तित्व का विश्लेषण कर लेना अत्यंत समीचीन होता है। क्योंकि रचना रचनाकार के व्यक्तिगत जीवन की अर्जित अनुभूतियों, स्मृतियों एवं कल्पनाओं की अभीव्यक्ति है। रचनाकार का व्यक्तित्व जितना सशक्त एवं गौरवपूर्ण होगा उसकी रचनाधर्मिता उतनी ही चमत्कृत और रसपूर्ण होगी ।

स्वातत्रंता के बाद भोगे हुए यथार्थ और कराहती हुई मानवीय संवेदना का हृदय उदारक चित्र साहित्यकारों ने खींचा वह हिन्दी साहित्य में अविस्मरणीय हैं। निर्मलवर्मा जी के उपन्यासों में आधुनिक मानव के चरमराते जीवन और उसकी छटपटाहट, संवेदना की गहराई और सूक्ष्म निरीक्षण दिखाई देती है। विदेशी प्रसंगों के वातावरण-शराब और सेक्स का नशा मात्र उन्होंने नहीं खींचा या उनका उपयोग केवल विदेशीपन की छोंक लगाने के लिए नहीं किया, बल्कि हिन्दी उपन्यास और कहानी साहित्य को इन्होंने एक नया रूप और एक नया आयाम दिया।

लेखक का किसी सामाजिक-राजनीतिक आन्दोलन से जुड़े होना स्वयं अपने से जुड़े होना हैं। जो लेखक सही अर्थों में प्रतिबद्ध होता है, प्रतिबद्ध उसके लिए आदर्श या त्याग या समाजसेवा की समस्या न कर अपनी ही सृजन-प्रक्रिया की एक अनिवार्य शर्त बन जाती है। इस सम्बन्ध में निर्मलवर्मा जी का कथन है कि "मैं प्रतिबद्ध होकर लिख रहा हूँ।"1

सौम्य मितभाषी (किन्तु जहाँ सिद्धान्तों की टकराहट हो वहाँ दृढ़)। अपने बारे में उन्होंने ही अपने शब्दों में "मुझमें चाहे कोई आकर्षण न हो, लेकिन किसी लुटी-पिटी 'बार'(Bar) या 'पब' (Pub) में पियक्कड़ों को या ऐसे 'तलछती' प्राणियों को, जो बहुत गहरे में जा चुके हेअपनी तरफ खींचने की अद्भुत क्षमता रही है। मुझे देखते ही वे मेरी मेज के ईर्द-गिर्द बैठ जाते थे। You are a Quiet Indian, are not you? (बाद में उनके बीच में लम्बे अर्से तक इसी नाम से प्रसिद्ध रहा) उनकी ऊपर से अनर्गल दीखनेवाली आत्मकथाओं में मुझे पहली बार उस अन्धेरे कोनों से साक्षात्कार हुआ, जिन्हें मैं छिपाकर रखता आया था। आज मैं जो कुछ है, उसका एक हिस्सा इन अज्ञात लोगों की देन है।"2

पुराने स्मारक और खँडहर हमें उस मृत्यु का बोध कराते हैं जो हम अपने भीतर लेकर चलते है। बहता पानी उस जीवन का बोध कराता है जो मत्यु के बावजूद वर्तमान है, गतिशीत हैं, अन्तहीन है। संकट की घड़ी में अपनी परम्परा का मूल्यांकन करना एक तरह से खुद अपना मूल्यांकन करना है, अपनी अस्मिता की जड़ों को खोजना है। हम कौन है - यह एक दार्शनिक प्रश्न न रहकर खुद अपनी नियती से मुठभेद करने का तात्कालिक प्रश्न बन जाता है। केवल अनुभव सीधे रचना में नहीं उतरता, वह स्मृति के माध्यम से रचना में आकर ढ़लता है। "कोई भी रचना न पूर्ण

रुप से स्वतंत्र है, न पूर्ण रूप से उपज, बल्कि जिस सेंकरे दरवाजे से लेखक खुद नहीं गुजर सकता, उनकी रचना अपने को एक अदृश्य छाया सी उस दरवाजे के अनुकूल समेट कर रास्ता बना लेती है।"3

जन्म और बचपन :

हिन्दी के प्रमुख उपन्यासकार निर्मलवर्मा जी का जन्म सन् १९२९ में शिमला में हुआ और बचपन का बड़ा हिस्सा पहाडों पर ही बीता। निर्मल वर्मा के बचपन के बारे में उन्होंने अपने ही शब्दों में कह रहे है कि "शिमला के वे देन आज भी नहीं भूला हूँ। सर्दियाँ शुरुहोते ही शहर उजाड़ से जाता था। आस-पास के लोग बोरिया-बिस्तर बाँधकर दिल्ली की ओर 'उतरायी' शुरू कर देते थे। बरामदे की रेलिंग पर सिर टिकाये हम भाईबहन उन लोगों को बेहद ईष्या से देखते रहते जो दूर अजनबी स्थानों की ओर प्रस्थान कर जाते थे। पीछे हमारे लिए रह जाते थे, चीड़ के साँय-साँय करते पेड, खाती भुतहे मकान, बर्फ में सिमटी हुए स्कूल जाने वाली पगडण्डी। उन सूनी कभी न खत्म होनेवाली शामों में हम उन अनजाने देशों के बारे में सोचा करते थे - जो हमेशा दूसरों के लिए हैं, जहाँ हमारी पहुँच कभी नहीं होगा। तब कभी कल्पना भी नहीं की थी कि एक दिन अचानक अपने छोटे-से कमरे, ग्रामफोन, कागज पत्रों को छोडकर बरसों 'सात समुद्र पार' करना होगा।"4

उन्होंने ने अपने शब्दों में "पहाडी मकानों की एक खास निर्जन किस्म की भुर्तली आभा होती है। इसे शायद वही समझ सकते हैं, जिन्होंने अपने अकेले साँय-साँय करते बचपन के वर्ष-बहुत से वर्ष एक साथ पहाड़ी स्टेशनों पर गुजार हों।"5

निर्मल वर्मा जी को हमेशा अपनी रचनाओं में यह महसूस होता हैं कि हर चीज की जड़ में साधारण लोगों की जिन्दगी है। कभी-कभी उनको यह विचार काफी दुःख देता है कि हम वास्तविक जिन्दगी में नहीं हैं - उनका मतलब है कि रंग और प्लास्टर में काम करने से कहीं ज्यादा बेहतर है खून और हाड़-मांसवाला काम करना, तसवीरें बनाने से कहीं अधिक सुखदायी है, बच्चों को जन्म देना या किसी व्यापार में लग जाना। लेकिन इसके बावजूद जब उन्होंने यह सोचता है कि "मेरी ही तरह मेरे कई दोस्त वास्तविक जिन्दगी के बाहर हैं, तो मैं फिर से अपने को जीवित महसूस करने लगता हूँ।'6

स्वयं उन्हें अपनी स्थिति की विड़म्बन का तीखा और सजग एहसास है - "लगता है जैसे हम परम्परा और आधुनिता के हाशिये पर जी रहे हैं। न एक में हमारा घर है, न दूसरे में हमारी सुरक्षा।'7 वे यह भी कहते हैं - "जैसे मेरी चेतना के बीचों-बीच एक फाँक खिंच गई है, एक तरफ आधुनिक अनुभव, जो मेरे वास्तविक यथार्थ को प्रतिध्वनित करता है दूसरी तरफ अखंडित संपूर्णता का अनुभव है जिस में मेरी संस्कृति का स्वप्न छिपा है।"8

इतिहास और स्मृति निर्मलवर्मा के प्रिय वस्तु है। निर्मलवर्मा के चिंतन में इतिहास के ठोस और विशिष्ट अनुभव है। उनकी पूर्व पश्चिम के द्वन्द्व में, परम्परा में, औपनिवेशिक और उत्तर औपनिवेशिक परिस्थिति में सुपरिभाषित अवस्थिति है। वहाँ परम्परा इसी स्मृति का अंग है बल्कि स्मृति को सहजने और समझने का साधना के बिना कोई गहरा या वस्तुपरक विश्लेषण किये, बरसों से निर्मलवर्मा को भारत-व्याकुल, अध्यात्मवादी, पुनरुत्थानवादी आदि कहकर उन्हें हिन्दी के सब से सशक्त प्रतिक्रियावादी के रुप में विख्यात हुई।

उनके व्यक्तित्व के कारण वे जो बदलता है, जो बदलाव की मुद्रा के बावजूद नहीं बदलता है और जो बदलने से ठिठकता है, उस सबको अपनी रचना के तानेबाने में विन्यस्त करनेवाले लेखक है। वे परिवर्तन के चालू छद्म से बचते है, वे परिवर्तन के सूक्ष्म, लगभग अदृश्य सच की पहचान के कलाकार है।

शिक्षा :

निर्मलवर्मा के पिता जी अंग्रेजों के जमाने में सरकारी अफसर थे, तो उन्हें शिमला और दिल्ली में रहना पड़ता था। इसलिए उनका शिक्षा भी शिमला और दिल्ली में हुआ। दिल्ली विश्वविद्यालय के सुप्रसिद्ध कालेज सेण्ट स्टीफेन्स से इतिहास में सन् १९५२ या १९५३ में एम.ए करने के बाद कुछ वर्ष अध्यापन कार्य किया। चेखव की कहानियाँ और

तुर्गनेव के उपन्यास से प्रभावित होकर आपने लिखना शुरू किया। उनके बड़े भाई राम कुमार। रामकुमार पेरिस में थे तो वे उनको बराबर बड़े कलाकारों की किताबें, उनके केटलाग्स भेजते रहते थे।

विदेशी भ्रमण :

"मैं बरसों से अपने देश के बाहर रहा हूँ इस से मेरे भीतर एक अलगाव-सा उत्पन्न हुआ है, जो मुझे कभी-कभी बोझ-सा जान पड़ता है। किन्तु दूसरी तरफ इसी 'अलगाव' ने मुझे अपनी जातीय अस्मिता और संस्कृति को एक ऐसे कोण से देखने का अवसर दिया है, जहाँ भ्रम और भुलावे के लिए गुंजाइश बहुत कम है। मैं एक साथ अपने कोबाहर और भीतर पाता हूँ। पश्चिम से मुझे एक तार्किक अन्तर्दृष्टि मिली है जिसके सहारे मैं ने अपनी सस्कृति के मिथक-बोध, बिम्बों और प्रतीकों की गौर-तार्किक अन्तर्चेतना को परखने की चेष्टा की है, दूसरी तरफ मैं खुद इस अन्तर्चेतना का अंग हूँ, जिसके आधार पर मुझे आधुनिक तर्कशील तकनीकी सभ्यता के अन्तर्विरोधों का अहसास भी होता रहा है।"9

सन् १९५९ में पहली बार उन्हें प्राग जाना हुआ था। वह समय था जव चेकोस्लोवाकिया में सेंसरशिप पुस्तकों पर पाबन्दियाँ और हर तरह का दमन अपनी चरम सीमा पर था। जिसे हम 'स्टालिनिस्टिक टेरर' का समय कहते है, वह समय बहुत ही भयंकर रूप से मौजूद था। स्वाभाविक रूप से निर्मलवर्मा उन दिनों बहुत से चेक लेखकों से मुलाकात हुई। सन् १९६१-६२ के दौरान ही जब निर्मलवर्मा ने चेक भाषा का अध्ययन समाप्त किया और प्राग की चार्ल्स यूनिवर्सिटि में चेक साहित्य के लेक्चर्स में शामिल हुआ जब उन्होंने पहली बार पाया कि जिसे हम एक अधिनायक वादी व्यवस्था के भीतर सेंसरशिप का अस्तित्व कहते है वह कितना कमजोर और ढ़ीला है। निजी रिश्ते अनेक लेखकों से बनते गये, उन्होंने पाया कि इन बुरे वर्षों में भी वे बराबर रचनाशील रहे है। सन् १९६४ तक की चकोस्लोवाकिया की स्थिति के बारे में बताया। वहाँ सात वर्ष रहकर अनेक चेक उपन्यासों और कहानियों का अनुवाद किया। बाद में आप बीच के समय में लन्दन चले गये थे। इस विदेशी भ्रमण उनके व्यक्तित्व और कृतित्व पर गहरा प्रभाव पड़ा है। सन् १९७७ में अमेरिका में आयोजित इन्टरनेशनल राईटिंग प्रोग्राम में भाग लिया। इस प्रकार विभिन्न देशों में भ्रमण करने के कारण अपनी रचनाओं में विभिन्न देशों की सभ्यता और संस्कृति दर्शाती है।

साहित्य के प्रति रुचि :

निर्मल वर्मा का साहित्य और चिन्तन उत्तर-औपनिवेशिक समाज में कुछ बहुत मौलिक प्रश्न और चिन्ताएँ उठाता है, जहाँ कथाकथित सामाजिक यथार्थ का आतंक सा छाया रहा है और मुखर किस्म की सामाजिकता साहित्य को लगभग आत्महीन बनाने पर उतारू है, अगर निर्मलवर्मा अपनी रचना और चिन्तन में पूर्णता और पवित्रता, उनकी खोज और सत्यापन, उनकी उपस्थिति और अनुपस्थिति, उनके अन्त संघर्ष और तनाव को मूलाधार बनाते हैं।

साहित्य के सम्बन्धी निर्मलवर्मा का विचार है कि "हमारे देश में साहित्य ऐसी संकोचजनक स्थिति में है, एक भीड़-भरे कमरे में घुसने की स्थिति में है, जहाँ उसके लिए कोई जगह नहीं है और उसे या तो धर्म, या समाजशास्त्र या हमारी रुढ़ नैतिकता के साथ, बारी-बारी से उनकी सेवा करते हुए आधी कुर्सी पर बैठना होता है।"10

निर्मलवर्मा का एक आत्मीय सम्बन्ध चित्रकला से बना। यह एक दिलचस्प प्रक्रिया होती है कि आप चित्रों में जो कुछ देखते है, थोड़ी-सी आदत और अभ्यास के बाद, प्रकृति का साम्य उसके साथ देखने लगते है। यह शायद कला का सब से बड़ा वरदान है। इस सम्बन्ध में निर्मल एक उदाहरण दिया कि - लगभग पाँच-छः वर्ष पहले उन्होंने इटेलियन सुर्रिचलिस्ट पेण्टर किरिको की एक पेंण्टिग एक किताब में देखी थी। किरिको मेरे बहुत प्रिय चित्रकार है। उस पेंण्टिग में एक लड़की पहिया घुमाती हुई दो सुनसान गलियों के बीच में चली आ रही है गलियों के दोनों तरफ मकान है। इस पेण्टिग को मैं भूल गया था, लेकिन अपना नया उपन्यास (रात का रिपोर्टर) लिखते हुए वह चित्र मेरे दिमाग में जिस तरह से उभर आया वह मुझे एक तरह का चामत्कारिक रहस्योद्घाटन लगा। अन्त अनुशासनीयता की बात मुझे बहुत बनावटी लगती है लेकिन चित्रकला, संगीत और साहित्य की संवेदनाएँ अगर अनायास रूप में हमारे संवेदन तन्त्रों को परिष्कृत करती है तो यह अपने में अद्भुत चीज होती है।

सभी महत्वपूर्ण कलाकृतियाँ इस अन्तर्विरोध का अह्सास कराती हैं - एक ओर लेखक की विश्वास करने की इच्छा और दूसरी ओर 'छद्म चेतना' के खिलाफ उसका संघर्ष जो विश्वासों को जन्म देती है। अपने व्यक्तिगत, अकेले अनुभव की एक ऐसी स्मृति में बदलने का संघर्ष जिस में सबका साँझा है, जो अदृश्य देते हुए भी सब की चीज है जिस से कोई भी रचना 'मिथ' की सार्वलौकिकता ग्रहण कर पाती हैं।

कलाकार के सम्बन्ध में निर्मलवर्मा का विचार हैं कि "मैं तुम से कहता हूँ कि उस मानवीयता का चित्रण करते हुए मैं थक गया हूँ जिस में मेरा कोई हिस्सा नहीं - - - मैं दो दुनिया के बीच खड़ा हूँ और उनमें सेकिसी में भी मेरा घर नहीं है।"11

निर्मलवर्मा के चिन्तन में इतिहास के ठोस और विशिष्ट अनुभव है। उसकी पूर्व-पश्चिम के द्वन्द्ध में, परम्मरा में, औपनिवेशिक और उत्तर औपनिवेशिक परिस्थिति में सुपरिभाषित अवस्थिति है। निर्मलवर्मा पश्चिम के लोकतंत्र और सोवियत अधिनायक वाद को एक ही किस्म की आधुनिक सभ्यता के दो पहलू और मानद जाति मात्र के अस्तित्व केलिए खतरा मानते है।

सम्प्रेषणीयता की भावना प्रेम से उत्पन्न होती है - तभी ईसा मसीह के अनुसार जहाँ तीन-चार लोग भी मुझे चाहते हो, मैं वहाँ मौजूद हूँ। इस भीड़ को न ईसा मसीह की जरूरत थी, न रचनाकार की - उसकी जरुरत को एक व्यावसायिक, बाजारू लेखक आसानी से पूरा कर सकता था। आधुनिक लेखक की यह विडम्बना है कि सम्प्रेषणीयता सिर्फ अर्थ खोकर और सिर्फ सम्प्रेषणीयता खोकर प्राप्त किया जा सकता है, आज के तकनीकी समाज की विलक्षण देन है।

यह एक ऐसे संश्लिष्ट रूप की साधना स्थली है जो एक साथ आधुनिक भी हो और जिस में शब्द, सत्य और सौंदर्य तीनों को एक रूप, एक-दूसरे की शर्तों पर चरितार्थ किया जा सके। कला की उसकी शुद्धता की मुखर पक्षधरता करनेवाले हिन्दी लेखकों में निर्मलवर्मा शायद अकेले हैं जिसके साहित्य में इस पक्षधरता के साथ-साथ नैतिकता, मर्यादा, पवित्रता, सत्य जैसे एक विशेष कोटि के प्रत्यय या भाव एक ओर बार-बार प्रकट होते है किन्तु दूसरी ओर जिन्हें किसी तरह की निश्चिन्त अवस्थिति का कोई सुख यहाँ उपलब्ध नहीं है। इनकी इस बेचैन उपस्थिति में ही यह साहित्य अपनी आत्मचेतना को रूपायित करता है।

लेखन के अलावा अन्य कलाओं में रुचि :

निर्मलवर्मा हिन्दी के उन विरले साहित्यकारों में है, जिन्हें लेखन के अलावा संगीत, चित्रकला तथा फिल्म में भी गहरी दिलचस्पी है। चित्रकला सम्बन्धी उसकी रुचि 'साहित्य के प्रति रुचि' में बदल गया। उनकी एक कहानी 'माया दर्पण' पर फिल्म बनी है। जिसे सन् १९७३ की सर्वश्रेष्ठ फिल्म का पुरस्कार प्राप्त हुआ है। निर्मलवर्मा के सास्त्यि और सिनेमा सम्बन्धी अपने विचार "कोई भी कला-कृति, कविता, चित्र, फिल्म - अपने में अन्तिम रूप से सम्पूर्ण है। उसका सत्य और मर्म उसके माध्यम से अलग करना असम्भव है - बल्कि यूँ कहें, स्वयं माध्यम का चुनाव लक्ष्य की खोज के साथ जुड़ा है। इस दृष्टि में फिल्म का सत्य अनूदित करना उतना ही निरर्थक प्रयास है, जितना कविता के मर्म को शब्दों से अलग करके देखने की कोशिश करना। आश्चर्य की बात है कि साहित्य का मूल्यांकन करते समय हम उस कसौटी को अलग रख देते हैं - - जैसे एक विधा की कसौटी दूसरी विधा से अलग हो। यही से भ्रति उत्पन्न होती है। साहित्य और फिल्म के बीच सही रिश्ते को पहचान ने केलिए पहली शर्त इस भ्रान्ति से छुटकारा पाना है।"12 मेरे विचार में "माया दर्पण - जैसी फिल्मों की सब से बड़ी उपलब्धि यह है कि उनमें ऐसे कोई सनसनीखेज 'प्रयोग' नहीं मिलते जो बम्बई या हालीवुड फिल्मों के आभूषण हैं - अपने में वे अत्यन्त साही, चमत्कारहीन किन्तु अपनी दृष्टि में अत्यन्त ठोस और जीवन्त फिल्में है।"13

हर रचना का रूपाकार लेखक के जीवन की विषय-वस्तु द्वारा निर्धारित होता है और चूँकि यह विषय-वस्तु समय के तकाजों, चुनौतियों और निर्णयों के तन्तुजाल से बना है स्वयं रूपाकार की खोज अपने जीवन में नैतिकता, सही शब्द, सही नाम की खोज से जुड़ जाती है।

निर्मलवर्मा के व्यक्तित्व पर धार्मिक प्रभाव :

धर्म का सम्बन्ध बचपन से ही उनका धार्मिक शिक्षाओं से है। धर्म से उनका सम्बन्ध वैसा ही रहा है जैसा किसी भी हिन्दू परिवार में लोगों का है। निर्मलवर्मा एक कथाकार जो कि भ्रम और यथार्थ के बीच काम करता है यह उसके लिए सब से मूल्यवान अन्तर्दृष्टि है। इस अर्थ में ही इसे एक धर्मिक अन्तर्दृष्टि के रूप में स्वीकार करता है।

भाषिक प्रभाव :

निर्मलवर्मा ने हिन्दी को एक नई कथाभाषा दी है, उसी तरह से हिन्दी की नई चिन्तन-भाषा के विकास में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका है। उनकी 'भाषा की ऐंद्रियता, सूक्ष्म से सूक्ष्म बखान भी कविता की तरह बिम्बों या स्मृतिचित्रों से करने की उनकी क्षमता, उनका शब्द संयम और मितव्ययता उनके कथा रूपों को एकाग्र भी बनाते है और साथ ही अनेकार्थी भी। वे अर्थों के बखान के नहीं, अर्थों की गुँजों और अनुगुजों के कथाकार है। वे अधिक बुनियादी और दूरगामी परिवर्तनों के धीमे-धीमे घटने या न घटने के साक्षी-लेखक है।

रचना संसार :

निर्मलवर्मा जी की साहित्यक फलक बहुत व्यापक है। उन्होंने पश्चिम सभ्यता को लेकर अनेक रचनाओं का सृजन किया। उन्होंने उपन्यास, कहानी, नाटक, निबन्ध, संस्मरण और अंग्रेजी लेखकों की रचनाओं का अनुवाद भी किया। उनकी रचनाओं में आधुनिकता बोध विस्तार रूप से दिखाई देता है। निर्मलवर्मा ने मनुष्य के अनुभव को बृहत्तर परिवेश में देखा। इसके लिए वे भारतीय और भारतेतर (यूरोपीय) संदर्भ लेते हैं। भारतीय संदर्भ हो या भारतेतर सब में पीडा अनुभूति मूल में एक ही है। यूरोप के मनुष्य की पीडा रंगभेद की है तो भारतीय की वर्ग-भेद और वर्ण भेद की। इस तरह निर्मलवर्मा की मानवीय पीड़ा और संत्रास का एक Cosmos रचते हैं, जिस में रंग-भेद, पारिवारिक सम्बन्धों के तनाव, अजनबीपन, अकेलापन के शिकार मनुष्य का चित्र खींचते हैं।

उपन्यास : "वे दिन"

निर्मलवर्मा का 'वे दिन' आधुनिक संवेदना से सम्पन्न उपन्यास है। पश्चिम के अर्थहीन परिवेश में जिस छोटे सुख की तलाश इस उपन्यास में की गई है, वह आज के सन्दर्भ में गैरमौजूँ नहीं लगती। इसे रोमैंटिक नहीं कहा जा सकता क्योंकि तीन दिन के सम्पर्क में 'मैं' और 'रायना' का शारीरिक सुख रोमैंटिक अर्थ में प्रेम नहीं बल्कि रोमानी प्रेम से अलग प्रेम की आधुनिकतावादी परिकल्पना है। अन्त में रायना के प्रति जो मोह उसमें उत्पन्न होता है, वह भावुकता न होकर 'मैं' का बचा हुआ वह मनुष्य है जिससे वह अलग हो गया है।

"जब मैं ने वे दिन लिखना शुरू किया था तो उसका स्थान विल्कुल अलग था। मैं रोम में एक महिला से मिला था। यह मेरी पहली बार अकेलापन और बहुत ही बेकारी के दिनों की स्थिति थी। मेरे पास पैसे भी नहीं थे और मै बहुत ही लुटे-पिटे होटल में ठहरा हुआ था। शाम को मैं काफी पीने गया तो वहाँ मुझे इंग्लैण्ड की ही एक महिला मिली। मेरी उनसे बातचीत होने लगी क्योंकि इटली में अंग्रेजी बोलनेवाले कम ही मिलते हैं। उन्होंने बताया कि वे एक 'टूरिस्ट ऑफिस' में काम करती हैं और यहाँ पर एक 'टूरिस्ट गाइड' के तौर पर आयी हुई है। बाद में उन्होंने मुझ से पूछा कि क्या आज शाम को मैं खाली हैं, तो मैं ने कहा कि हाँ मैं खाली हैं। लेकिन मैं गया नहीं क्योंकि मेरे पास इतने पैसे नहीं थे कि मैं उनको 'एण्टरटेन' कर सकता। मेरी बहुत इच्छा थी कि मैं शाम को उनसे मिलूँ लेकिन मुझे लगा कि यह बहुत ही अजीब होगा कि मैं ने काफी भी उन्हीं के पैसों की पी थी और शाम का खाना भी उन्हीं के पैसों का खाऊँ और उनकी जगह अपने को 'एण्टरटेन' करूँ। उस महिला का एक 'टूरिस्ट गाइड' के तौर पर रोम के रेस्तारों में मुझ से मिलना, मुझे तब तक याद रहा, जब तक मैं प्राग नहीं आ गया और जब मैं ने हिन्दुस्तान आकर वे दिन लिखना शुरू किया तो अजीब बात यह थी कि रोम में मिली उस महिला का एक गठित रुप प्राण शहर के परिप्रेक्ष्य में मेरे भीतर जन्म लेता है। शायद आपको यह दिलचस्प चीज लगेगी कि प्राग और एक व्यक्ति का पारस्परिक सम्बन्ध पूरे मूर्त और ठोस रूप

में जब तक मेरे भीतर नहीं बना तब तक वे दिन के समूचे कथानक ने अपना आकार ग्रहण नहीं किया, हालाँकि उपन्यास का रिश्ता न तो रोम से है और न ही इस महिला से।"14

लाल टीन की छत :

आधुनिकता बोध के उपन्यासों की परम्परा में 'लाल टीन की छत' भी काफी प्रसिध्द है। इन में कही वैयक्तिक, तो कही पारिवारिक-सामाजिक विषमताओं का मुखर विरोध मिलता है। इस उपन्यास में एक वयःसन्धि को पार करती लड़की के अपने अन्तःकरण से बाहर निकलने की कहानी अंकित की गयी है, जिस में काम चेतना की अनुभूति लक्षित हुई है। इस उपन्यास में अस्तित्व की खोज में पात्र की सम्पूर्ण अनुभूतियाँ संवेदना के धरातल पर तीव्रता से सामने आती हैं।

स्वयं उपन्यासकार अपने शब्दों में ही अभिव्यक्त किया कि - "काया ही एक ऐसा चरित्र है जो किसी एक खास लड़की को लेकर नहीं रचा गया बल्कि काया मेरे बचपन के सब स्मृति अंशों का एक पुंजीभूत चरित्र है तो यह ज्यादा सही होगा। काया निर्मलवर्मा केलिए एक रूपकात्मक अभिव्यक्ति रही है, बचपन के उन वर्षों के बदहवास और विक्षिप्त किस्म के अकेलेपन की जो हम हर बरस शिमला में बिताते थे। अकेली मेम या माँ या पिता या चाचा के चरित्र हैं ये सब भोगे हुए चरित्रों से सूत्र लेकर आये हैं। लामा और काया चरित्रहीन पात्र जो बचपन की स्मृति से उत्पन्न नहीं हुए उस स्वप्न से उत्पन्न हुए जो हमारा बचपन है। वह शायद ऐसा पहला उपन्यास है जिस में निर्मलवर्मा सीधे-सीधे एक रेखा नहीं खींच सकता कि इनका सम्बन्ध इस एक खास स्मृति से हैं।'15

एक चिथड़ा सुख :

निर्मलवर्मा का उपन्यास 'एक चिथड़ा सुख' अपने ढेर सारे पात्रों के साथ उनके अधूरेपन की गाथा कहनेवाला एक नायक विहीन उपन्यास है। इसमें महानगर के पात्रों की भटकन तथा उनके अधूरेपन की संवेदना चित्रित हुई है। इस उपन्यास में महानगरीय जीवन की विसंगतियों का चित्रण हुआ है।

रात का रिपोर्टर :

निर्मलवर्मा का नया उपन्यास 'रात का रिपोर्टर' आज की राजनैतिक विसंगतियों के शिकार एक बुद्धिजीवी रिपोर्टर रिशी के मानसिक संकट का ब्यौरा है। व्यवस्था और स्वतंत्रता का परस्पर विरोध और तनाव आज के युग की मूल समस्या है। इनके पारस्परिक सम्बन्धों के बिगड़ने पर ही आपतकालीन स्थिति का आविर्भाव होता है। निर्मलवर्मा ने रात का रिपोर्टर में रिशी के द्वारा अपने आन्तरिक संकट और इस संकट के कारण स्वयं अपने जीवन और अपने निकटतम व्यक्तियों के साथ अपने सम्बन्धों के पुनरावलोकन और पुनर्मूल्यांकन की कहानी प्रस्तुत की है। बाहर का डर अन्दर के डर से घुलमिल कर रिशी के जीवन में तुफान खड़ा कर देता है जिससे न भागा जा सकता और न ही जिसे भोगा जा सकता है। रिशी भी अन्त में इस शून्यता से व्याधिग्रस्त हो जाता है। रात का रिपोर्टर मानवीय स्थिति के इस आयाम से बेखबर, उदासीन जैसा लगता है।

कहानी संग्रहः

१) परिन्दे
२) जलती झाड़ी ।
३) पिछली गर्मियों में
४) बीच बहस में
५) मेरी प्रिय कहानियाँ
६) कल्वे और काला पानी

नाटकः
तीन एकान्त
दुसरी दुनिया

निबन्ध और संस्मरणः
चीडों पर चाँदनी
हर बारीश में
शब्द और स्मृति
कला का जोखिम
ढ़लान से उतरते हुए

अंग्रेजी में अनूदितः
डेज ऑफ लांगिण (वे दिन)
हिल स्टेशन (कहानियाँ)

अनुवाद :
कुप्रीन की कहानियाँ
कारेल चापेक की कहानियाँ
इतने बड़े धब्बे (सात चेक कहानियाँ)
झोंपडेवाले (रूमानियन कहानियाँ)
रोम्यो, जूलियट और अंधेरा (उपन्यास) (मूल लेखक : यान ओत्वेनाशेक)
बाहर और परे (उपन्यास) (लेखक : इर्शा फीड)
एमेके की गाथा (उपन्यास) (लेखक : जोसेसकशेरेस्की)
आर.यू.आर (नाटक) (लेखक : कारेल चापेक)

देश के सर्वोच्च साहित्यिक सम्मान ज्ञानपीठ पुरस्कार से वरिष्ठ साहित्यकार निर्मलवर्मा जी के व्यक्तित्व और कुतित्व के विभिन्न आयामों पर प्रकाश डालते हुए उनके कृतित्व का संक्षिप्त परिचय देना मेरा सौभाग्य है। निर्मलवर्मा का साहित्य और चिन्तन समाज में कुछ बहुत मौलिक प्रश्न और चिन्ताएँ उठाता है जहाँ कथाकथित सामाजिक यथार्थ का आतंक सा छाया रहा है और मुखर किस्म की सामाजिकता साहित्य को लगभग आत्महीन बनाने पर उतारू है, अगर निर्मलवर्मा अपनी रचना और चिन्तन में पूर्णता और पवित्रता, उनकी खोज और सत्यापन, उनकी उपस्थिति और अनुपस्थिति, उनके अन्तर संघर्ष और तनाव को मूलाधार बनाते हैं। । स्वतंत्रोत्तर हिन्दी साहित्य में निर्मलवर्मा का स्थान विशिष्ट है। सशक्त उपन्यासकार के अतिरिक्त कहानीकार, नाटककार, विचारक एवं समीक्षक के रूप में भी निर्मलवर्मा जी के गंम्भीर व्यक्तित्व उभरकर आये।

संदर्भ सूची :
1) निर्मल वर्मा - शब्द और स्मृति, पृ० ३३ - ३४
2) निर्मल वर्मा - मेरी प्रिय कहानियाँ, भूमिका , पृ० ८
3) निर्मल वर्मा - शब्द और स्मृति, पृ० २६

4) निर्मल वर्मा - चीडों पर चाँदिनी, पृ० ७
5) निर्मल वर्मा - मेरी प्रिय कहानियाँ, भूमिका, पृ० ८
6) निर्मल वर्मा - शब्द और स्मृति, पृ० ३२
7) संपादक : - अशोक वाजपेयी - निर्मलवर्मा, पृ० ९
8) संपादक : - अशोक वाजपेयी - निर्मलवर्मा, पृ० ९
9) निर्मल वर्मा - शब्द और स्मृति, प्राक्कथन, पृ० १०
10) निर्मल वर्मा - शब्द और स्मृति, पृ० ३३
11) निर्मल वर्मा - शब्द और स्मृति, पृ० २५ .
12) निर्मल वर्मा - शब्द और स्मृति, साहित्य - सिनेमाः सही रिश्ते की पहचान, पृ० ७९
13) निर्मल वर्मा - शब्द और स्मृति, साहित्य - सिनेमाः सही रिश्ते की पहचान, पृ० ७९
14) संपादक : अशोक वाजपेयी, पृ० १९
15) संपादक : अशोक वाजपेयी : निर्मल वर्मा, पृ० २८

डॉ.ए.सी.वी.रामकुमार
सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग, तमिलनाडु केंद्रीय विश्वविद्यालय, तमिलनाडु, भारत।

LBP PUBLICATION